देवालय, देवतागृह और उपासनाकी विधि।

दशरथ महीपाल के शासनकाल में अयोध्यानगरी में हरेक घर में जैसे देवगृह, अर्थात् वह कमरा जहाँ पर देवता की पूजा की जाती है, हवन करने के लिए यज्ञगृह अथवा संध्या करने का स्थान विद्यमान था, उसी प्रकार ग्राम एवं नगर में देवताओं के मन्दिर अर्थात् ही देवालय अस्तित्व में थे। रामायण में इसके बारे में कुछ उल्लेख पाये जाते हैं उन, का यहाँ पर विचार करना ठीक होगा।

मंगलालापनैर्होमैः शोभिताः क्षौमवाससः।
देवतायतनान्याशु सर्वास्ताः प्रत्यपूजयन् ॥
(वा. रा. बाल. ७७-१२)

राजमहल में जिस समय सभी स्त्रियाँ और वहुओंसहित राजकुमार एवं राजा दशरथ पहुँच गये, तब 'उन सबों ने रेशमी वस्त्र धारण किये (क्षौमवाससः) और आभूषण आदि पहन कर अलंकृत हो मंगल होमहवनकृत्य किया, पश्चात् (देवतायतनानि) देवताओं के मन्दिर में जाकर वहाँ पर अवस्थित देवताओं की (आशु) तुरन्त ही उन्होंने (प्रत्यपूजयन्) पूजाअर्चा की।'

हमारी राय में, इस वर्णन में उपलब्ध 'देवतायतन' शब्द अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। देवता का यह स्थान घर घर में भी हो सकता है और हर गली में पाये जानेवाले सार्वजनिक मन्दिर में भी हो सकता है। यह वर्णन राजमहल में गृहप्रवेश करते समय किया हुआ है, इसलिए राजप्रासाद के अन्दर ही इस मन्दिर के होने की संभावना है। प्रायः दशरथ के प्रासाद के निकट ही यह मन्दिर होगा। यहाँ पर अनेक-वचनी प्रयोग (देवतायतनानि) किया हुआ है, जिससे अनुमान होता है, इन मन्दिरों की संख्या तीन से बढकर ही होगी। कम से कम तीन तो होंगे ही। कह नहीं सकते कि क्या ये विभिन्न देवताओं के थे और ज्ञात नहीं कि भीतर कौन देव विद्यमान थे।

जिस समय कौसल्या को विदित हुआ कि, श्रीरामचन्द्रजी का राज्याभिषेक संपन्न होने जा रहा है, तब वह ध्यान में निरत हो बैठी थी। देखिये--

सीता चानायिता श्रुत्वा प्रियं रामाभिषेचनं ॥ ३१ ॥
तस्मिन्कालेऽपि कौसल्या तस्थावामीलितेक्षणा।
सुमित्रयान्वास्यमाना सीतया लक्ष्मणेन च ॥ ३२ ॥
श्रुत्वा पुष्ये च पुत्रस्य यौवराज्येऽभिषेचनम्।
प्राणायामेन पुरुषं ध्यायमाना जनार्दनम् ॥ ३३ ॥

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तथा सनियमामेव सोऽभिगम्याभिवाद्य च ।
उवाच वचनं रामो हर्षयंस्तामिदं वरम् ॥ ३४ ॥

(वा. रा. अयोध्या ४)

गोविंदराजटीका– 'प्राणायामेन प्राणायामपूर्वकं पुरुषं पुरुषसूक्त-प्रतिपाद्यपुरुषशब्दवाच्यं जनार्दनं नारायणं ध्यायमाना ध्यायन्ती आमीलितेक्षणा तस्थौ ।'

रामायणशिरोमणिटीका– 'प्राणायामेन जनार्दनं महाजनैः प्रार्थितं पुरुषं ध्यायमाना ।'

"जब कौसल्याने आनन्दप्रद समाचार सुन लिया कि, कल ही रामचंद्रजी का राज्याभिषेक होनेवाला है, तब वह (तस्मिन् काले) उसी समय अर्थात् तीन पहर बीत जाने पर (आमीलितेक्षणा तस्थौ) आँखें मुँदकर ध्याननिरत हो बैठी । वहीं पर सीता, सुमित्रा तथा लक्ष्मण तीनों उपस्थित थे । कल पुष्यनक्षत्र के समय अपने पुत्र का यौवराज्याभिषेक हो जायगा, ऐसा हर्षोत्पादक संवाद सुन कर कौसल्या प्राणायाम से 'जनार्दन' नामक देवता का ध्यान करने लगी । वह इस प्रकार धर्मनियम में मग्न हुई थी और रामचन्द्रजी उसके निकट जा पहुँचे और प्रणामपूर्वक उस से सारा प्रिय समाचार कह दिया ।" इस से ऐसा प्रतीत होता है–

(१) कौसल्या को रामराज्याभिषेक का समाचार मिला ।

(२) तुरन्त उसने प्राणायाम किये और—

(३) आँखें मूँदकर 'जनार्दन-पुरुष' का ध्यान करना उसने शुरू किया ।

इस स्थान पर 'जनार्दनपुरुष' पद का स्पष्टीकरण टीकाकारद्वारा यों हुआ है– 'जिस नारायण का प्रतिपादन पुरुषसूक्त में हुआ है और जिस की आराधना सभी लोग किया करते हैं, वह पुरुष है ।' अतः इस समय कौसल्या जिस देव का आँखें मीचकर प्राणायाम करती हुई, ध्यान कर रही थी, वह पुरुषसूक्त में वर्णित 'पुरुष' ही है । इस से कहा जा सकता है–

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(४) पुरुषसूक्त में प्रतिपादित पुरुष की जानकारी कौसल्या को थी और वह उस का ध्यान करती थी।

यहाँ पर एक अत्यन्त विचारणीय प्रश्न उपस्थित होता है कि, प्राणायाम करना तथा पुरुषसूक्त में वर्णित नारायणदेव का आँखें मीचकर ध्यान करना वैदिक ज्ञान प्राप्त कर चुकने पर ही हो सकता है, अथवा वेदज्ञान के अतिरिक्त भी ये कृत्य किये जा सकते हैं। वेदों का साक्षात् ज्ञान के बिना उपनयन के सम्भव नहीं और वर्तमानकाल में स्त्रियों का उपनयनसंस्कार नहीं किया जाता है, अतः वे प्राणायाम नहीं करती हैं। पर यहाँ तो कौसल्या प्राणायाम कर रही है, ऐसा वर्णन है। प्राणायाम करने के लिए उपनयन की आवश्यकता है या नहीं, यह भी एक महत्त्वपूर्ण प्रश्न है।

कौसल्या प्राणायामपूर्वक, पुरुषसूक्त में कथित नारायण का ध्यान, नेत्र बंद करके कर रही थी, इस वर्णन से ऐसा कहा जा सकता है कि, रामायणकालीन आर्यस्त्रियों को ऐसे ध्यानधारणाकार्य में एक उच्च कोटि का पद मिल चुका था। कौसल्या क्षत्रियकुल की स्त्री थी और अगर वह इस ध्यानधारणाकार्य में ऊँची भूमिका पर पहुँच गयी थी, तो यह सुतरां संभव है कि, ब्राह्मणवंश की महिलाएँ इसी तरह या इससे भी अधिक श्रेष्ठ पद को पहुँच गयी होंगीं।

प्राणायाम करना हो, तो उसके लिए आसन पर बैठकर सुखासन या किसी अन्य आसन की स्थिति में बैठना अत्यन्त आवश्यक है, केवल योंही खडे खडे नहीं किया जा सकता है। प्राणायाम के उपरान्त कौसल्या ध्यानमग्न हो बैठी थी। इससे स्पष्ट है कि, विधि के अनुसार शास्त्रीय ढंग से आसन जमाकर बैठने पर ही उसने प्राणायाम के पश्चात् ध्यान किया होगा।

कल पुष्यनक्षत्र पर रामचन्द्रजी का राज्याभिषेक होने जा रहा है। इसलिए पहले दिन के सायंकाल में वसिष्ठ पुरोहित के नाते राम के समीप आ पहुँचे और उन्हों ने राम से कहा कि सीता के साथ उस रात्री को उसे उपवास करना होगा। इसके सिवा, ऐसे अवसर पर और क्या करना

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चाहिए, यह स्पष्टतया कह दिया। रामचन्द्रजी ने सीता के साथ वसिष्ठ-ऋषि के कथनानुसार जो किया वह यों है।

गते पुरोहिते रामः स्नातो नियतमानसः ।
सह पत्न्या विशालाक्ष्या नारायणमुपागमत् ॥ १ ॥
प्रगृह्य शिरसा पात्रीं हविषो विधिवत्ततः ।
महते दैवतायाज्यं जुहाव ज्वलितानले ॥ २ ॥
शेषं च हविषस्तस्य प्राश्याऽऽशास्यात्मनः प्रियं ।
ध्यायन्नारायणं देवं स्वास्तीर्णे कुशसंस्तरे ॥ ३ ॥
वाग्यतः सह वैदेह्या भूत्वा नियतमानसः ।
श्रीमानायतने विष्णोः शिश्ये नरवरात्मजः ॥ ४ ॥
एकयामावशिष्टायां रात्र्यां प्रतिविबुध्य सः ॥ ५ ॥
पूर्वां संध्यामुपासीनो जजाप सुसमाहितः ॥ ६ ॥
तुष्टाव प्रणतश्चैव शिरसा मधुसूदनम् ।
विमलक्षौमसंवीतो वाचयामास स द्विजान् ॥ ७ ॥
(वा. रा. अयोध्या. ६)

"राजा के पुरोहित वसिष्ठ ने उपवास करने की क्रिया रामचन्द्रजी को बतलाई और वे चले गये। बाद में रामचन्द्रजी ने स्नान करके मन का संयम किया और सीता के साथ नारायण की उपासना करनी प्रारम्भ की। हाथ में हवनपात्र ले उचित ढंग से अग्नि प्रदीप्त कर उसने (महते दैवताय) उसमें बडी देवता को लक्ष्य में रख आहुति दी। हवन के पश्चात् बचा हुआ घृत खा लिया और अपने कल्याण के लिए उस देवता से प्रार्थना की। स्वयं ही कुशासन फैलाकर, मन एवं वाणी का संयम कर चुकने पर सीता के साथ नारायण देवता का ध्यान करना शुरू किया और इस प्रकार ध्याननिमग्न हो रामचन्द्रजीने उस विष्णु के मंदिर में ही उस रात्रि को शयन किया। रात का एक पहर अभी शेष था कि, रामचन्द्रजी उठकर स्नान आदि से निवृत्त हुए और पूर्वदिशा की ओर मुँह करके अवश्य करणीय प्रातःसन्ध्या समाप्त की और शांत

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चित्त से गायत्रीमंत्र का जप किया। मधुसूदन के सम्मुख सिर नवा कर धुले हुए रेशम के कपडे पहन लिए और ब्राह्मणों से पुण्याहवाचन करने के लिए कह दिया।"

कौसल्या जनार्दन पुरुष की उपासना करती थी, ऐसा ऊपर कहा जा चुका है। सीता के साथ बैठकर रामचन्द्रजी ने जो उपासना की है, वह नारायण, मधुसूदन देवता की है।

(१) रामः पत्न्या सह नारायणं उपागमत् = राम अपनी पत्नी के साथ नारायण के समीप चला गया और उसने नारायण की उपासना की।

(२) ज्वलितानले महते दैवताय आज्यं जुहाव = धधकती आगमें बडी देवताके लिए घृतका हवन किया।

(३) विष्णोः आयतने शिश्ये = विष्णुके देवालय में रामचन्द्रजी उस रात्री को सो गए।

(४) पूर्वां सन्ध्यां उपासीनः जजाप = प्रातःकालीन संध्या करते समय उसने गायत्रीमन्त्र का जप किया।

(५) मधुसूदनं शिरसा प्रणतः = मधुसूदन के सामने सर नवाया।

इन पाँच वाक्यों का रामचंद्रजीने की हुई उपासनाके वर्णन में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। (१) नारायण की उपासना, (२) बडी देवताके नामसे हवन, (३) विष्णु के मंदिरमें शयन, (४) प्रातःकालीन संध्या और गायत्री का जप तथा (५) मधुसूदन को प्रणाम इतने प्रकार रामचन्द्रजीने उस रात्रीको किए और इसके अतिरिक्त वाणी, मन तथा अन्य इंद्रियों का संयम एवं उपवास भी किए। यहाँ स्पष्ट है कि एकही देवके तीनों नाम नारायण, विष्णु तथा मधुसूदन हैं। नेत्र बन्द करके कौसल्याने जिस 'जनार्दन पुरुष' की उपासना की थी, वह पुरुष और यह 'नारायण' एकही है। इसे ही पुरुषसूक्तमें वर्णित पुरुष समझना

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चाहिए। ऐसा कहनेमें कोई आपत्ति नहीं कि, जिस देवका ध्यान कौसल्याने किया था, उसी देव का ध्यान रामचन्द्रजी ने सीता के साथ किया।

'महत् दैवतं' इस देव के नाम पर रामने हवन किया था और यह 'महत् दैवतं' नारायण ही है, क्योंकि पुरुषसूक्त के द्वारा प्रतिपादित नारायण के अतिरिक्त अन्य कोई देव महान् नहीं है। उसी प्रकार (विष्णोः आयतनं) विष्णु के देवालय का जो उल्लेख यहाँ पर हुआ है, वह इसी नारायण का ही देवालय है। इसीलिए ऐसा मान लेना ठीक होगा कि, 'महत् दैवत, पुरुष, नारायण, विष्णु, जनार्दन, मधुसूदन' सभी नाम एक ही देवता के लिए प्रयुक्त होते थे।

यहाँ यह समझने के लिए कोई उपाय नहीं है कि, इस देवता की उपासना कैसे की जाती थी। कौसल्या आँखें बंद कर प्राणायाम के साथ ध्यान करती थीं। रामचन्द्रजी ने हवन किया और बाद में सिर झुकाकर अभिवादन किया है। ध्यान, उपासना तथा संध्या भी रामने की हैं और जप भी गायत्रीमंत्र का ही किया है।

यहाँ प्रश्न उठ खडा होता है कि, क्या उपासना मूर्तिकी की जाती थी? चूँकि, 'विष्णोः आयतनं' ऐसे शब्द हैं, अतः इस देवतागृह में विष्णु की मूर्ति प्रस्थापित की थी, ऐसा जान पडता है। उसी प्रकार अग्नि में रामने हवन किया है, इस से जान पडता है, इसी देवता के निकट हवन-कुंड भी होगा। प्रायः मंदिर के बीच में मूर्ति होगी और उस के समीप ही हवनकुंड बनाया गया हो। वर्णन है कि, अग्नि प्रज्वलित कर राम-चंद्रजीने हवन किया। उस के पहले वह सीता के साथ नारायण के समीप चला गया, (नारायणं उपागमत्) शायद यही नारायणकी मूर्ति हो। नारायण अग्नि से विभिन्न है। स्नान कर चुकने पर राम दर्शनार्थ नारायण की मूर्ति के समीप चला गया। उस देव का दर्शन ले चुकने पर अग्नि प्रदीप्त कर दिया और उस में घृत की आहुति दे डाली। बचे हुए घृत का सेवन कर नारायण का ध्यान किया और वहीं पर विष्णुमंदिर में

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कुशासन फैलाकर निद्रासुख का अनुभव ले लिया। रामचन्द्रजी का पूर्व-रात्री का कार्यक्रम इस तरह था।

यहाँ आरम्भ तथा अन्त में नारायण का दर्शन और बीच में हवन ऐसा क्रम दीख पडता है। ऐसा नहीं कहा जा सकता कि, सभी नाम अग्नि के ही हैं और अग्नि की ही उपासना की गयी है। ऐसा प्रतीत होता है कि, अग्नि के अतिरिक्त एक विभिन्न तथा मूर्ति में प्रतिष्ठापित देवता के लिए ही 'विष्णु तथा नारायण' शब्दों का प्रयोग किया है।

अपने महल में कौसल्याने समीप सुमित्रा, सीता तथा लक्ष्मण को बिठलाकर (सीतया, सुमित्रया, लक्ष्मणेन च अन्वास्यमाना) जनार्दन की उपासना प्रचलित कर रखी थी और यह जनार्दन का उपासनागृह कौसल्या के प्रासाद में ही था।

उधर रामचंद्रजी भी सीता के साथ विष्णु के मंदिर में सो गये, नारा-यण के निकट जाकर उस की उपासना की और अग्नि में आहुति डाल दी। राम के प्रासाद में ही यह उपासना का स्थान था।

इसी तरह बालकांडके ७७ वें सर्गमें जो उल्लेख पाया जाता है कि, सभी लोग वधूओं के साथ देवतागृहों में जाकर एकत्रित रूप से पूजा कर चुके। वे देवताओं के मंदिर शायद राजप्रासाद के होंगे, या सार्वजनिक भी हो सकते हैं। इस पर से कल्पना की जा सकती है कि, प्रत्येक नागरिक के गृह में देवगृह हुआ करता था और वैसे ही सबों का मिलकर सार्वजनिक देवालय भी रहते थे।

कैकेयी के दुराग्रह तथा हठ के कारण राज्यारोहण के शुभ मुहूर्त पर ही रामचन्द्रजी को वनवास के लिए चला जाना पडा और यह खेदजनक समाचार कौसल्या से कहने के लिए राम उस के मंदिर में चला गया, तब वह पूजा तथा हवन करती हुई बैठी थी। वह प्रार्थना कर रही थी कि, रामचन्द्रजी को राज्य मिले और उस का कल्याण होवे। उस समय की देवपूजा का वर्णन भी उपासना करने के ढंग से देखने पर मनन करने-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

योग्य है। कौसल्या बडे आनन्द में थी और समझती थी कि, आज दिन अपने सभी मनोरथ पूर्णरूपेण सफलित हुए। ऐसी हर्षपूर्ण तथा आनन्द-विभोर दशा में बडी भक्ति से वह देवपूजा कर रही थी। उस का वर्णन यों है—

कौसल्यापि तदा देवी रात्रिं स्थित्वा समाहिता।
प्रभाते चाकरोत् पूजां विष्णोः पुत्रहितैषिणी ॥१४॥
सा क्षौमवसना हृष्टा नित्यं व्रतपरायणा।
अग्निं जुहोति स्म तदा मंत्रवत् कृतमंगला ॥ १५ ॥
प्रविश्य तु तदा रामो मातुरन्तःपुरं शुभं।
ददर्श मातरं तत्र हावयंतीं हुताशनम् ॥ १६ ॥
देवकार्यनिमित्तं च तत्रापश्यत् समुद्यतम्।
दध्यक्षतघृतं चैव मोदकान् हविषस्तथा ॥ १७ ॥
लाजान् माल्यानि शुक्लानि पायसं कृसरं तथा।
समिधः पूर्णकुम्भांश्च ददर्श रघुनन्दनः ॥ १८ ॥
तां शुक्लक्षौमसंवीतां व्रतयोगेन कर्शिताम्।
तर्पयन्तीं ददर्शाद्भिः देवतां वरवर्णिनीम् ॥ १९ ॥

(वा. रा. अयोध्या. स. २०)

" पिछली रात्रि में कौसल्या व्रतस्थ रह चुकी थी। वह प्रातःकाल उठ गयी और पुत्र के कल्याण की कामना से (विष्णोः पूजां अकरोत्) विष्णु की पूजा करने लगी। व्रतवैकल्य का श्रद्धापूर्वक अनुष्ठान करनेवाली वह रेशीम के कपडे पहन मंगल के उपरान्त (मंत्रवत्) समंत्र ढंग से (अग्निं जुहोति स्म) अग्नि में हवन करती हुई बैठी थी। इतने में राम वहाँ आ पहुँचे और उन्होंने देखा कि, अपनी माता हवनकार्य करवा रही है। इस देवकार्य के लिए एकट्ठा किया हुआ, वस्तुसंग्रह वहाँपर समीप ही रखा गया था। रामने वह सारी सामग्री भी देख ली। दही, अक्षता, घृत, लड्डू, हविर्द्रव्य, लाजाएँ, सफेद फूल, पायस, तिलों से मिलाया

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

हुआ अन्न, खिचडी, समिधा, पानी से भरे हुए घडे सभी वहाँ पर रखे थे। ब्राह्मणों के द्वारा हवनक्रिया चलाई जा रही थी। रामने यह सब कुछ देखा। व्रतों के आचरण से एवं उपवासों के निमित्त कौसल्या कुछ कृशसी दीख पडती थी। उसने सफेद वस्त्र पहन लिये थे और जलों के द्वारा देवता का तर्पण वह कर रही थी।"

इस वर्णन से ऐसा जान पडता है कि—

(१) पूजा, ध्यानधारणा, होमहवन के समय रेशम के वस्त्र पहने जाते थे।

(२) महिलाएँ पूजा करती थीं, हवन करती थीं (जुहाव) और प्राणायामपूर्वक ध्यानधारणा भी कर लेती थीं।

(३) उसी प्रकार नारियाँ ब्राह्मणों के द्वारा हवन करवा लेती थीं। (हावयंती) इस शब्द से जान पडता है, दूसरों से वह क्रिया करवाई जाती थी।

(४) जल तथा फूलों से पूजा की सामग्री सिद्ध की जाती थी और हवन के लिए घृत, लड्डू, पायस, मूँग से मिले हुए तिल तथा अन्न, अक्षता, लाजा तथा समिधा इकट्ठी की जाती थी। जल से भरे हुए घडे हवनस्थल के समीप रखे जाते थे।

(५) ऊपर कहा जा चुका है, कौसल्याने विष्णु की पूजा प्रातःकाल ही करली थी। इस से ज्ञात होता है, स्त्रियाँ विष्णुपूजा क्रिया करती थीं।

(६) कौसल्याने अपने निवासगृह में ही यह सब पूरा किया था, अतः प्रत्येक गृह में 'देवगृह' की स्थापना की जाती थी, ऐसा प्रतीत होता है।

चूँकि कौसल्या तथा राम दोनों अपने अपने महल में पूजा, अर्चा एवं हवन निष्पन्न कर लेते थे, अतः स्पष्ट है कि, स्वयं ही ये सभी कृत्य पूर्ण कर लेने का ज्ञान इन्हें प्राप्त था। यदि कोई विशेष ढंग का आह्निककृत्य हो, तो ही ब्राह्मण को बुलवाकर उस से वह कार्य करवाया जाता था, या

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शायद ब्राह्मण के कथनानुसार स्त्रियाँ पूजा कर लेती थीं।

ऊपर कहा है कि (मंत्रवत् जुहाव) कौसल्याने मंत्रोंसह हवन किया। इसपर निम्नलिखित टीकाएँ हैं –

१. तिलकटीका– अग्निं अग्निहोत्रं मंत्रवत् जुहोति स्म ज्येष्ठपत्नीत्वात् ऋत्विजा इति शेषः ॥ १५ ॥

२. रामायणशिरोमणिटीका– मंत्रवत् मंत्रविशिष्टं यथा स्यात् तथा अग्निं जुहोति स्म ॥ १५ ॥

३. गोविन्दराजटीका– जुहोति हावयति ब्राह्मणैरिति शेषः ॥ १५ ॥

ये सभी टीकालेखक कहते हैं कि वह ब्राह्मणों से मन्त्रयुक्त हवन करवाती थी। सब की राय ऐसी दीखती है कि कौसल्या ज्येष्ठ राज्ञी थी, अतः उसे समंत्र हवन करवाने का अधिकार था।

रामचन्द्रजी खुद सभी वैदिक कर्म समंत्रक कर सकते थे, क्योंकि वसिष्ठने उन्हें ऐसी शिक्षा दी थी। चित्रकूटपर्वतपर जब भरतद्वारा उन्हें अपने पिताके स्वर्गवास का समाचार विदित हुआ, तब उन्होंने स्वयं ही वहाँके जलप्रवाहके निकट चले जाकर उत्तरक्रिया पूर्ण की, ऐसा रामायणमें उल्लेख है। जो स्वयं ही मन्त्रसहित उत्तरक्रिया करने की क्षमता रखता हो, वह होमहवन तथा पूजा जैसे कार्य अवश्य कर सकता है, इस विषयमें सन्देह के लिए स्थान नहीं।

सन्ध्या और हवन।

यात्रा करते समय और अयोध्यासे विश्वामित्रके आश्रममें जाते समय राम तथा लक्ष्मण प्रातःकाल और सायंकाल अनिवार्यरूपसे संध्या करते थे, ऐसा बालकांड तथा अयोध्याकांडसे विदित होता है–

प्रातःकालीन सन्ध्या।

स्नात्वा कृतोदकौ वीरौ जेपतुः परमं जपम् ॥ ३ ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

कृतान्हिकौ महावीर्यौ विश्वामित्रं तपोधनम् ॥
अभिवाद्यातिसंहृष्टा गमनायाभितस्थतुः ॥ ४ ॥
(वा. रा. बाल. सर्ग २३)

ततः प्रभाते विमले कृतान्हिकमरिन्दमौ ॥ १ ॥
(वा. रा. बाल. सर्ग २४)

सुप्रभाता निशा राम पूर्वा सन्ध्या प्रवर्तते ।
उत्तिष्ठोत्तिष्ठ भद्रं ते गमनायाभिरोचय ॥ २ ॥
तच्छ्रुत्वा वचनं तस्य कृतपूर्वाह्निकक्रियः ॥ ३ ॥
(वा. रा. बाल. सर्ग ३५)

पूर्वां संध्यामुपासीनो जजाप सुसमाहितः ।
(वा. रा. अयोध्या. ६।६)

अयो. स. ३२।३ में सुयज्ञके "मध्याह्नसंध्या" करनेका उल्लेख है ।

सायंसंध्या ।

स्नाताश्च कृतजप्याश्च हुतहव्या नरोत्तम ।
(वा. रा. बाल सर्ग २३)

रात्रि का एक प्रहर बीत जानेतक यह संध्याकाल रहा करता है, इस विषय में देखिए-

शनैर्विसृज्यते संध्या नभो नेत्रैरिवावृतम् ॥
(वा. रा. बाल सर्ग ३४)

यहाँपर कहा है कि, ज्यादह रात बीत जानेसे संध्या का समय निकल जा रहा है । अगले श्लोक में कहा है कि राजा जनकने प्रातःकाल करनेयोग्य संध्या आदि धार्मिक कृत्योंका निपटारा किया-

ततः प्रभाते जनकः कृतकर्मा महर्षिभिः ।
(वा. रा. बाल. सर्ग. ७०)

इन सभी वचनों को देखनेसे स्पष्ट होता है कि, नियमपूर्वक प्रातःकाल सूर्योदयके अवसरपर और सायंकालमें सूर्यके अस्त होते समय संध्योपासना की जाती थी । यह संध्या निस्सन्देह वैदिक संध्या ही है । क्षत्रिय कुमारों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

को वेदमन्त्रोंद्वारा संध्या करनेका अधिकार था ही। इस संध्यामें—

१. (परमं जपं जेपतुः कृतजपाः।); गायत्रीमंत्रका जप मुख्य था।

२. (कृतान्हिकौ) इसे 'आन्हिक' नाम दिया गया था। 'आन्हिक' शब्द का अर्थ है प्रतिदिन करनेका कार्य।

३. (कृतकर्मा, कृतौदकौ) इस अवसरपर जलोंसे तर्पण, मार्जन आदि कर्म निभाए जाते थे।

४. (कृतपूर्वाह्लिकक्रियः) बडे तडके उठकर करनेयोग्य धार्मिक कृत्य का उल्लेख यहाँपर किया है।

५. (हुतहव्याः) संध्या के उपरान्त हवन भी करते थे, ऐसा प्रतीत होता है।

६. (स्नात्वा) नहानेपर ही यह क्रिया की जाती थी। सायंसंध्या के मौकेपर प्रायः सदैव स्नान न भी करते हों।

६. संध्या करने का समय रात्री का प्रथम पहर बीत जाने तक रहता है, ऐसा मानते थे। यदि किसी कठिनाई के कारण कोई ठीक समय पर संध्योपासना न कर सके तो आगे एक पहर तक वह कर सकता था। देखिए बालकांड ३४।१६।

ऐसा प्रतीत होता है, संध्या, हवन जैसे आह्लिकाविभाग त्रैवर्णिकों को, कम से कम ब्राह्मणों तथा क्षत्रियों को, पढाया जाता था। रामचंद्रजी के बारे में कहा है कि, वे श्रौतस्मार्त सकल धर्मरहस्य को जाननेवाले थे। उनकी योग्यता थी कि वे वेदवेदांग-तत्त्वज्ञः सर्वशास्त्रार्थ-तत्त्वज्ञः माने जाते थे। अतः स्पष्ट है कि सभी श्रौतकर्मों की जानकारी रामचद्रजी को थी। आवश्यक कर्मों को वे खुद निभा सकते थे।

विश्वामित्र या रामलक्ष्मण यात्रा करते समय विष्णु, नारायण या जनार्दन की पूजा करते थे, ऐसा उल्लेख कहीं भी नहीं, अतः कह सकते हैं कि प्रायः यात्रा में इन देवताओं की पूजा नहीं की जाती थी। लेकिन यात्रा में भी देवताओं की प्रार्थना की जाती थी।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रत्येक नागरिक के घर में (देवतायतन) देव का मंदिर प्रस्थापित था जहाँ पर 'विष्णु, नारायण, जनार्दन' की मूर्तियाँ रखी जाती थीं और उनकी पूजाअर्चा की जाती थी। स्त्रियाँ तक प्राणायाम के साथ ध्यान करती थीं। इसी देवगृह में हवनकुंड रहता था, जिसमें हवन किया जाता था और यह महान् देवताके उपलक्ष्य में हुआ करता था। ऊपर कही हुई नारायण की उपासना भी पुरुषसूक्त में वर्णित पुरुष की ही थी। इसके अतिरिक्त हरेक की वैयक्तिक उपासना, संध्या एवं जपजाप्य आदि जो कुछ आह्निककर्म थे, वे नियमपूर्वक निभाये जाते थे। इन कार्यों को करते समय रेशम के वस्त्र पहने जाते थे।

मूर्ति की पूजा के लिए फूल, पुष्पमालाएँ काम में लाई जाती थीं और चन्दन, सौरभयुक्त उबटन का भी प्रयोग किया जाता था। यदि इसके सिवा उपासना का दूसरा कोई प्रकार हो तो उसकी गवेषणा वाल्मीकि-रामायण में करनी चाहिए।

सार्वजनिक देवालय ।

रामायण में ऊँचे ऊँचे शिखरों से युक्त सार्वजनिक देवालयों का उल्लेख पाया जाता है; देखिए-

सिताभ्रशिखराभेषु देवतायतनेषु च ।
चतुष्पथेषु रथ्यासु चैत्येषु अट्टालकेषु च ॥
(वा. रा. अयोध्या. सर्ग ६।११)

अयोध्यामें ऐसे (देवतायतनेषु) देवालय पाये जाते थे, जिन के शिखर सफेद मेघखंडके समान चमकते थे। (चैत्येषु) ऊँचे देवताओंके स्थान, धार्मिक पूजा करने की जगह, मंदिर, (अट्टालक) किनारोंपर बुर्ज लगे हुए जहाँपर शत्रुदलसे जूझने के लिए लिए सामग्री रखी जाती थी। राज्याभिषेकके पिछले दिन राजाने आज्ञा दे रखी थी कि, उन स्थानोंपर ध्वज तथा पताकाएँ लगवाकर शोभा उत्पन्न करनी चाहिए।

गोविंदराजटीकामें कहा है कि, इस स्थानपर जो 'चैत्य' शब्द है, उस का अर्थ, बौद्ध मन्दिर, ऐसा है-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

(१) गोविंदराजटीका- चैत्येषु बौद्धालयेषु, अट्टालकेषु प्राकारोपरि युद्धार्थं परिकल्पित-चतुःस्तंभमण्डपेषु।

(२) रामायणशिरोमणिटीका- चैत्येषु चैत्यं चैतन्यमस्ति येषु ... ... चैत्येषु बौद्धालयेषु इति गोविंदाचारिव्याख्यानं तु ... ... त्यक्तव्यम्॥ (अयोध्या. ६।११)

'चैत्य' का अर्थ 'देवालय, ऊँचे शिखरसे युक्त देवगृह' है। गोविंद-राजके कथनानुसार बौद्धदेवस्थान का नाम चैत्य है और रामायणशिरोमणि के रचयिता की रायमें 'उनका यह मत अग्राह्य तथा त्याज्य है.'। हाँ, आगे चलकर संस्कृत भाषामें चैत्य शब्द का अर्थ बौद्धमन्दिर हुआ है, पर ऐसा निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता कि, इस शब्द का केवल मात्र यही अर्थ हो सकता है। अतः ऐसा प्रतिपादन करना कि, इस शब्द के आधार पर रामायण की रचना बौद्धों के पश्चात् हुई, यह निश्चित हुआ, उचित नहीं जान पडता है। इस संबन्ध में अन्य प्रमाणों को देखकर ही निर्णय कर लेना ठीक होगा। इसी लेखमें इस विषय की चर्चा साधकबाधक प्रमाणोंद्वारा आज ही करने का कारण हमें नहीं दीख रहा है।

इन देवालयों के दरवाजों को सफेद रँगसे रँग दिया जाता था। इस का यह प्रमाण है-

शुक्लदेवगृहद्वारां (अयोध्या. ७।४)

देवालयोंके द्वारपर सफेद वर्ण लगाया जाता था। ऊपर कहा गया है कि शिखर मेघोंके जैसे निर्मल दिखाई दे रहे थे। उस काल में किन देवताओं को मान्यता दी गयी थी, यह निम्नलिखित वर्णनसे स्पष्ट होता है-

शृण्वन्तु त्रयस्त्रिंशद्देवाः सेन्द्रपुरोगमाः॥ १३॥
चन्द्रादित्यौ नभश्चैव ग्रहा रात्र्यहनी दिशः।
जगच्च पृथिवी चेयं सगन्धर्वाः सराक्षसाः॥ १४॥
निशाचराणि भूतानि गृहेषु गृहदेवताः।
यानि चान्यानि भूतानि जानीयुर्भाषितं तव॥ १५॥
(वा. रा. अयोध्या. ११)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

'इन्द्रके साथ रहनेवाले ३३ देवतागण, चन्द्र, सूर्य, आकाश, ग्रह, रात्रि, दिन, दिशा, जगत्, यह पृथ्वी, गन्धर्व एवं राक्षसोंसह सभी निशाचर तथा भूतगण, घरमें विद्यमान गृहदेवता और अन्य जो भूत हैं, सभी सुन लेवें कि, दशरथ क्या कह रहा है।' कैकेयी चिल्लाचिल्लाकर इस प्रकार कह रही है।

इस स्थानपर अनेक देवताओंका उल्लेख किया गया है। पर इसमें कुछ भी शास्त्रीयता या वैज्ञानिकता नहीं है। प्रायः ३३ देवताओं में सूर्य, चन्द्र, एवं, पृथ्वी का अन्तर्भाव होता होगा, परन्तु यहाँपर असावधानतापूर्वक उनकी विभिन्न गिनती की गयी है। संभव है कि कैकेयी की तत्कालिक मनोवृत्तिके अनुकूल ही यह भाषण हो। हमारी रायमें (गृहेषु गृहदेवताः) यह उल्लेख अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। इससे स्पष्ट है कि, प्रत्येक घरमें, गृहमें पूजनीय देवताओं की प्रस्थापना की जाती थी। गृहमें विद्यमान देवगृहमें येही देवता रहते थे। सार्वजनिक देवालयों में सार्वजनिक रीत्या पूजित देव रखे जाते थे। कैकेयीके उपर्युक्त भाषणमें गन्धर्वों, राक्षसों तथा अन्य भी भूतोंका नामनिर्देश है। परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि, आर्यलोग इनकी पूजा नहीं करते थे। भगवद्गीतामें कहा है कि—

यान्ति देवव्रता देवान् पितृन् यांति पितृव्रताः।
भूतानि यांति भूतेज्याः यांति मद्याजिनोऽपि माम्॥

(भग. गी. ९।२५)

इससे जान पडता है कि 'देव, पितर, भूत तथा भगवान्' की पूजा उस समय प्रचलित थी। परन्तु यहाँ पर जो भूत शब्द है, वह ऊपर के भूत शब्द से विभिन्न अर्थ में प्रयुक्त हुआ है, ऐसा प्रतीत होता है। कैकेयी का भाषण सुनकर दशरथ चिढ जाता है और कहता है—

स्वर्गेऽपि खलु रामस्य कुशलं दैवतैरहम्।
प्रत्यादेशादभिहितं धारयिष्ये कथं बत॥ ६॥

(वा. रा. अयोध्या. स. १२)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

"हे कैकेयी! मेरे निधन के उपरान्त स्वर्ग पहुचने पर यदि देव मुझसे पूछें कि क्या रामचंद्रजी सकुशल हैं, तो मैं भला उनसे क्या कहूँगा।"

इस स्थान पर स्वर्गमें रहनेवाले देवताओं का उल्लेख है, पर मनुष्योंद्वारा पूजनीय देव ये नहीं हैं। जो स्वर्ग में जाते हैं, वे सभी देव बनते हैं और निःसंदेह ये सभी मानवों के उपास्य नहीं बन सकते हैं। संभवतः कुछ उपास्य देव बन जानेकी क्षमता रखते हों और कइयों में ऐसी योग्यता न भी रहती हो। इस रामायण में इसके अतिरिक्त, देवता की उपासना के बारेमें अगर कुछ उल्लेख पाये जाते हों, तो सूक्ष्मेक्षिका से उनकी गवेषणा करनी चाहिए। अब तक जितनी जानकारी मिली, वह ऊपर दी गयी है।

देवपूजा के साधन।

देवपूजा के लिए किन किन वस्तुओं का उपयोग करते थे, यह देखना अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। वर्तमानकाल में देवपूजा के लिए षोडश उपचार निर्दिष्ट किये गये हैं। यदि कोई अतिथि अभ्यागत या मेहमान घर आ जाय, तो पहले उसे बैठने के लिए आसन देते हैं, पैर धोनेके लिए पानी ला देते हैं, प्रशंसापूर्ण कुछ शब्द कहे जाते हैं, खानेपीने के लिए खाद्यपेय सामने रख देते हैं, प्रातःकाल का समय हो, तो स्नान के लिए पानी, पश्चात् वस्त्रचन्दनादि के साथ फूल एवं पुष्पहार दे देते हैं। बाद में आहार आदि हुआ करता है और तदुपरान्त नृत्य, या कमसे कम गायनवादनादि कार्यक्रम से उसका मनोरंजन किया जाता है। पश्चात् उसे गाडीमें बिठला कर सैरसपाटे के लिए साथ ले चलते हैं। बहुधा रामायणकालीन पूजा का प्रकार भी इसी प्रकार का होगा ऐसी कल्पना की जा सकती है। इसे षोडशोपचार कहते हैं। यदि पहले रामायणकाल में मानव, परस्परों का आदरसत्कार किस ढंगसे करते थे और स्वयं उनका बर्ताव कैसे था, इसकी जानकारी मिले, तो सुगमता से हम जान सकते हैं कि देवता की पूजा में कौन से उपचार किये जाते थे। अतः हम इसका विचार करेंगे।

रामचन्द्रजीके राज्याभिषेक के लिए जो सामग्री इकट्ठी की गयी थी,

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

उसमें सम्भवतः पूजाके उपयुक्त कुछ न कुछ मिल जायगा, इसलिए यहाँ-पर उसका निरीक्षण करना ठीक होगा।

राज्याभिषेक की सामग्री।

अयोध्याकांडके तृतीय सर्गमें श्लोकसंख्या ९ से १२ तक अभिषेकोपयुक्त वस्तुओं का वर्णन पाया जाता है। उसमें निम्नलिखित चीजों का निर्देश किया है-

१. सुवर्णादि सभी रत्न; २. (वलीन् पूजाद्रव्याणि) पूजाके लिए उपयुक्त पदार्थ; ३. सभी ओषधियाँ; ४. सफेद फूल, ५. लाजा; ६. शहद; ७. घृत ८. बिलकुल न पहने हुए नये कपडे (अहतानि वासांसि) ९. रथ एवं सभी हथियार; १०. चतुरंगसेना; ११. अच्छे लक्षणों से युक्त हाथी; १२. पंखा और चामर; १३. ध्वज; १४. सफेद छत्री; १५. सौ सुवर्णकलश, १६. बैल जिसके सींगोंपर सुवर्ण लगाया गया हो, १७. समूचा अखंड बाघ का चमडा।

इसमें उल्लिखित वस्तुएँ, जैसे रत्न, पुष्प, शहद, घृत, छत्र, चामर, व्यजन एवं पूजाद्रव्य, सभी सत्कारके कार्यमें उपयुक्त हैं। पूजाके लिए भी येही एकत्रित की जाती हैं।

पूजा का विचार करते समय आगे कहे हुए आदेश भी ध्यान में रखने-योग्य हैं।

द्वारपूजा।

अन्तःपुरस्य द्वाराणि सर्वस्य नगरस्य च।
चन्दनस्रग्भिरर्च्यन्तां धूपैश्च घ्राणहारिभिः॥

(वा. रा. अयोध्या. ३।१३)

"अन्तःपुरके तथा नगर के सभी दरवाजों को चन्दन, पुष्पहार और श्रेष्ठ सौरभयुक्त धूपसे पूजित करो।"

इस वर्णन से स्पष्ट दीख पडता है कि, रामायणकालमें 'द्वारपूजा' की जाती थी। इस समय उत्तरभारतमें यह द्वारपूजा विलुप्त सी हो चुकी

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है, पर दक्षिण भारतमें अभीतक यह बडे समारोह से मनाई ज़ाती है। वेदमें भी 'देवीः द्वारः' देवता मानी गयी है। चन्दन, फूल तथा धूप से इसकी पूजा की जाती थी। अतः निस्सन्देह कहा जा सकता है कि पूजा की सामग्री में पुष्पमाला, फूल, धूप तथा चन्दन का समावेश होता था।

राज्याभिषेक की सामग्री का वर्णन सर्ग १४, श्लोक २६–४१ और सर्ग १५, श्लोक ४–८ तक फिर एक बार किया है। पहले जिनका उल्लेख नहीं हुआ था, ऐसी वस्तुओंको ही अब हम देखेंगे–

१. चन्दन, अगुरु एवं धूप चारों ओर डाले गए थे। २. सोनेके घडे जिनमें गंगा की पानी और समुद्र का जल भर रखा था। ३. औदुंबर का आसन। ४. सब प्रकार के बीज। ५. सौरभपूर्ण वस्तु। ६. फूल, दूध, दही, शहद, दर्भ तथा लाजा। ७. अष्ट कन्या। ८. सिंह। ९. समिधा। १०. अग्नि आदि।

इसमें स्नान के लिए गंगानदी तथा समुद्र का जल, चन्दन, आसन, सुगन्धयुक्त द्रव्य, सौरभपूर्ण धूप सभी पूजा के लिए उपयुक्त वस्तुएँ ही हैं। सर्ग १५ में श्लोक ४ से १३ तक अनेक नदियों का जल और पूर्व-निर्दिष्ट सभी वस्तुओं की तालिका फिर दुहरायी गयी है। इन तीनों स्थानोंमें उल्लिखित वस्तुओंमें से सहजही में ज्ञात हो सकता है कि सोलह उपचार पूजाके लिए किन वस्तुओं का ग्रहण किया जाता था।

राजा की महापूजा तो राज्याभिषेक ही है। प्रतिदिन थोडी पूजा करनी हो, तो हम तनिकसी सामग्री इकट्ठी कर लेते हैं, पर ऐसे अवसर पर वह बहुत बडे पैमाने पर संगृहीत की जाती है। सामग्री वही रहती है, कमसे कम पूजा का जो हिस्सा रहता है, वह दोनों ओर समान रहता है, ऐसा कहने में कोई आपत्ति नहीं उठाई जा सकती है।

ध्यान, आवाहन (बुलाना), आसन, पाद्य (पैर धोनेके लिए पानी,) अर्घ्य, आचमनीय, (मुँह धोनेके लिए पानी), स्नान, वस्त्र, अलंकार-समर्पण, चन्दन अनेकविध परिमल द्रव्य, पुष्प, धूप, दीप, नैवेद्य-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

भोजन, आरति, तांबूल, पुष्पांजलि- अत्तर-गुलाबजल हार, इसके साथ ही छत्र, चामर, व्यजन, नृत्य, गीत, वाद्य आदि राजोपचार का अर्पण करना आदरसत्कार का कार्यक्रम था। इस समय प्रचलित प्रकार भी लगभग इसी तरह है। यद्यपि कुछ उपचार कम हुए और अन्य कुछ नये ढंगके बढ गये हैं। साधारण प्रणाली पूर्व जैसी ही है और हम देखते हैं कि देवपूजा का कार्यक्रम भी इसी ढंग का है।

चन्दन का लेप किया जाता था।

रामायणकालीन लोगों में स्नान के पश्चात् चन्दन एवं शरीरपर उबटन लगवाने की प्रथा थी, ऐसा दिखाई देता है। देखिए–

वराहरुधिराभेण शुचिना च सुगन्धिना।
अनुलिप्तं परार्ध्येन चन्दनेन परंतपम् ॥ १ ॥

(वा. रा. अयोध्या. स. १६)

'निर्दोष, सौरभपूर्ण, बहुमूल्य तथा लाल रंगवाले चन्दन का अनुलेप रामचन्द्रजीने किया था।' इससे सिद्ध होता है कि उन दिनों नहा चुकनेपर चन्दन लगाया करते थे! इसी कारण देवपूजामें भी इस का अन्तर्भाव हुआ था।

उस समय कोई सिया हुआ कपडा रामने धारण नहीं किया था, यह स्पष्ट है, क्योंकि यदि वह कुरता, कोट वगैरा कोई सिया हुआ कपडा पहन लेता, तो शरीरपर लगाया हुआ चन्दन बाहरसे दीखना असंभव था।

मार्गपर धूप को प्रज्वलित करते थे।

जब सडकोंपर बहुत भीड होती हो, तब वायु स्वच्छ करनेके लिए धूप सुलगाया जाता था, देखिए—

राजमार्गं ययौ रामो मध्येनागुरुधूपितम्।
चन्दनानां च मुख्यानां अगुरूणां च संचयैः ॥ ३ ॥
उत्तमानां च गंधानां क्षौमकौशाम्बरस्य च।
आविद्धाभिश्च मुक्ताभिः उत्तमैः स्फाटिकैरपि ॥ ४ ॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

शोभमानमसंबाधं तं राजपथमुत्तमम्।
संवृतं विविधैः पुष्पैः भक्ष्यैरुच्चावचैरपि ॥ ५ ॥

(वा. रा. अयोध्या. स. १७)

"राजपथपर चन्दन अगुरुके संचय बहुत अधिक मात्रा में जलाया करते थे, जिसके फलस्वरूप सारा शहर सौरभ से परिपूर्ण हुआ करता था। समूचा राजमार्ग पुष्प, रेशम के कपडे तथा अन्य वस्तुओं से पूर्णतया ढका हुआसा प्रतीत होता था।"

ऐसा सुन्दर दृश्य रामचन्द्रजीने देखा। मार्गपर चन्दन की लकडियाँ जलाई जाती थीं, ऐसा प्रतीत होता है। यहाँपर यह निश्चित करना ठीक होगा कि, यह चन्दन का प्रज्वालन नागरिक स्वच्छता अक्षुण्ण बनाए रखनेके लिए किया जाता था अथवा चौराहे की पूजा करते समय कार्यान्वित किया जाता था—

ददर्श तं राजपथं दिवि देवपतिर्यथा ॥ ६ ॥
दध्यक्षतहविर्लाजैर्धूपैरगुरुचन्दनैः।
नानामाल्योपगन्धैश्च सदाभ्यर्चितचत्वरम् ॥ ७ ॥

(वा. रा. अयोध्या. स. १७)

"चतुष्पथ की पूजा समाप्त हो चुकी थी, अतः स्थान स्थान पर अक्षता, दधि, हवि, धूप, लाजा, अगुरु, चन्दन तथा भाँति भाँति के पुष्प दिखाई देते थे।" चौराहों की इस प्रकार पूजा करने के कारण वहाँ पर चन्दन, अगुरु की गठरियाँ प्रदीप्त हो उठती थीं और उनका सौरभ नगरभर में फैल चुका था।

अब यह निस्सन्देह सिद्ध होगा कि, चन्दनों का प्रज्वलन, भलेही चौराहे की पूजा करने के लिए या वायु पवित्र करने के हेतु निष्पन्न होता हो; अयोध्या के मार्ग में खुली जगह इस प्रकार चन्दन जलाया करते थे, जिस के परिणामस्वरूप नगरभर में सुगन्धी फैल जाती थी और उस सौरभ से सभी लोग हर्षित होते थे। समय प्रातःकालका था और सूर्य का उदय हो प्रायः एक घंटा बीत चुका होगा। ऐसे समय, सारा वायुमंडल सौरभ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

से परिपूर्ण हो सके, इतना चन्दन जलाया गया था। इसके सिवा घरघरमें जो हवन होता रहता था, उस में भी शायद चन्दन की लकडियाँ डाली जाती हों। यह धार्मिक प्रथा असंशय उत्तम है। यहाँ पर देखनेयोग्य है कि, किस तरह वायुशुद्धि तथा धार्मिक विधि का उत्कृष्ट ढंगसे गठबंधन कर दिया गया था।

आजकल म्युनिसिपालिटियाँ गन्धक जला देती हैं और फिनैल डलवाती हैं, जिससे हर रास्ते पर दुर्गन्धी आया करती है। परन्तु रामायण-काल में सूर्योदय के पहले ही सभी सडकें साफसुथरी कर दी जाती थीं, द्वारपूजा के पश्चात् चन्दनानुलेप कर पुष्पमालाओं को टाँग कर समीपही धूपप्रज्वालन हुआ करता था। (चत्वर पूजा) चौराहों की पूजा हो चुकने पर वहाँ चन्दन का संभार अग्नि में डाला जाता था। सुज्ञ लोग सोच लें कि पुरानी तथा नयी इन दो प्रणालियोंमें से कौन अधिक अच्छी है।

देवालय, देवगृह और उपासना के संबंध में अब तक जो लिखा जा चुका है, उससे रामायणकालीन धार्मिक प्रबंध का परिचय पाठकों को हुआ होगा। देवपूजा के बारे में और भी कुछ वचनों का ख्याल करना चाहिए, वह अब किया जायगा।

देवपूजा

जो नारी (निवृत्ता देवपूजनात् अयोध्या २४।२७) देवकी पूजा न करती हुई पतिकी सेवा करती है, उस स्त्रीको स्वर्ग प्राप्ति सुनिश्चित है, इतना पतिसेवाका महत्त्व है।

भर्तुः शुश्रूषया नारी लभते स्वर्गमुत्तमम्।
अपि या निर्नमस्कारा निवृत्ता देवपूजनात्॥

(रा. अयोध्या. २४।२७)

यहाँपर स्त्रियों की देवपूजाका उल्लेख है और यह देव की पूजा अर्थात् देवों की मूर्तिकी ही है। उसी प्रकार–

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

अग्निकार्येषु च सदा सुमनोभिश्च देवताः ।
पूज्यास्ते मत्कृते देवि ब्राह्मणाश्चैव सत्कृताः ॥

(रा. अयोध्या. २४।२९)

'अग्निमें हवन करते समय श्रेष्ठ फूलोंद्वारा देवताओंकी पूजा भी मेरे हितके लिए (मत्कृते) तू कर और ब्राह्मणों का सत्कार कर।' यहाँपर फूलोंसे देवताओं की पूजा करनेका उल्लेख है और यह वनमें जानेवाले राम का हित हो, इसलिए है। कौसल्या फिर कहती है-

येभ्यः प्रणमसे पुत्र देवेष्वायतनेषु च ।
ते च त्वामभिरक्षन्तु वने सह महर्षिभिः ॥८॥

(वा. रा. अयोध्या. २५)

"हे राम! जिन देवों तथा देवालयस्थ दैवतों को तू प्रणाम करता है, वे देव अरण्य में तरी रक्षा करें।" कौसल्या के इस कथन से भी स्पष्ट होता है कि, देवालयों में विद्यमान देवताओं का नमन किया जाता था। कौसल्या और भी कहती है-

नृमांसभोजना रौद्रा ये चान्ये सर्वजातियाः ।
मा च त्वां हिंसिषुः पुत्र मया संपूजितास्त्विह ॥२०॥

(वा. रा. अयोध्या. २५)

"जो नरमांसभोजी जातियाँ हैं, उनकी पूजा मैं इधर करूँगी और उस पूजासे संतुष्ट हो वे तुझे कष्ट नहीं पहुँचायेंगे।"

यहाँपर एक शंका उठ खडी होती है कि, क्या उस समय देवोंके समान ही हिंस्र जातियों की भी पूजा करने की प्रथा प्रचलित थी. क्योंकि इस तरह उनकी पूजा करने से वे सन्तुष्ट होंगी और पश्चात् वे वन में घूमनेवाले रामचन्द्र की हिंसा नहीं करेंगे, यह अपेक्षा यहाँ की इस पूजामें है। यह विचारणीय है कि यदि इन हिंसक जीवोंकी पूजा उस समय प्रचलित थी, तो निःसंदेह पूजा करनेयोग्य देवतागण बहुतही बडा होना चाहिए।

उस मौकेपर कौसल्याने रामचंद्रजी का अभीष्टचिंतन किया और कई देवताओं का नामनिर्देश किया। उनकी तालिका बनाना ठीक प्रतीत

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

होता है, जिस में उस समय की पूजनीय देवताओं तथा अन्य भी कई पूज्य वस्तुओं का अंतर्भाव है ।

(वा. रा. अयोध्या २५।७-३०) समिधा, दर्भ, वेदी, देवालय, स्थण्डिल, शैल, वृक्ष, झाडियाँ, हृद, पक्षी, सर्प, सिंह, साध्य, विश्वेदेव, मरुत्, महर्षि, धाता, विधाता, पूषा, भग, अर्यमा, लोकपाल, इन्द्रप्रमुख देव, छहः ऋतु, मास, संवत्सर, रात्रि, दिन, मुहूर्त, श्रुति, स्मृति, धर्म, स्कंद, चन्द्र, बृहस्पति, सप्तर्षि, नारद, सिद्ध, दिशा और दिशाओं के अधिपति, पर्वत, समुद्र, राजावरुण, द्युलोक, अंतरिक्ष, पृथिवी, वायु, नक्षत्र, ग्रह, अहोरात्र दोनों संध्याकाल, कला, काष्ठा, देव, दैत्य सभी तेरी रक्षा करें। राक्षस, पिशाच, भीषण बर्बरतापूर्ण कार्यकर्ता जो हों, उनसे तू निर्भय रह। कृमि, कीटक, पतंग आदि से तुझे भय न हो। किसी से भी तुझे भीति न होवे। शुक्र, सोम, सूर्य, कुबेर, यम तेरी रक्षा करें। अग्नि, वायु, धूम, मंत्र, ब्रह्मदेव, ऋषि, अन्य देवता सभी तेरा संरक्षण करें। ऐसा कह कर पुष्प, गन्ध आदि से कौसल्याने इनकी पूजा की। ब्राह्मण के हाथों विधिपूर्वक हवन करवाया। घृत, सफेद फूल, समिधा, सरसों से यथोचित ढंग से पूजा एवं आहुति देदी। पश्चात् बाहर चले जाकर—

हुतहव्यावशेषेण ब्राह्मं बलिमकल्पयत् ।

(वा. रा. अयोध्या. २५।२९)

बचे हुए हविर्द्रव्यसे बलिहरण किया। ये सभी कार्य शहद, दधि, अक्षता तथा घृत से निपटाकर उसने रामचन्द्रका स्वस्त्ययन किया।

यहाँपर अनेक देवताओंका उल्लेख है। अधिकतया प्रमुख देवता वैदिक ही हैं। 'राक्षस, पिशाच, तथा सर्प, का उल्लेख विचारणीय है। अभीतक भारत में सर्पपूजा विद्यमान है और नागपंचमीके दिन वह होती है। सर्पों के देवालय पाये जाते हैं और कई जातियों में सर्पपूजा अभी-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तक प्रचलित है। रामायण के समयमें भी वह रूढ थी। अन्तमें कौसल्या कहती है—

मयार्चिता देवगणाः शिवादयो महर्षयो भूतगणाः सुरोरगाः।
अभिप्रयातस्य वनं चिराय ते हितानि कांक्षन्तु दिशश्च राघव ॥

(रा. अयोध्या. २५।४३)

" शिवसदृश देवसमूह, महर्षि, भूतसमुदाय, सुर, सर्प तथा दिशाएँ सभी तेरे हितकी इच्छा करें। मैं उनकी पूजा कर उन्हें सन्तुष्ट करूँगी।"

इसके पश्चात् रामचन्द्रजी की प्रदक्षिणा कर चुकनेपर कौसल्याने आँसू भरी आँखोंसे उसे देखकर हृदय से लगाया। राम भी माताके चरणोंपर अपना सिर रखकर वहाँ से सीताके घरकी ओर चला गया।

इस अवतरण में अनेक पूजा करनेयोग्य देवताओं का निर्देश किया गया है। यह संभव नहीं है, इन सभी देवताओंकी मूर्तियाँ हों। ऐसा प्रतीत होता है कि किसीपर आवाहन कर चुकनेपर ही गंधपुष्पअक्षता आदिसे इनकी पूजा की जाती हो। कुछ देवताओं की मूर्तियाँ तो अवश्य विद्यमान थीं और कुछ अन्य देवताओंकी पूजा किन्हींपर उनका आवाहन करके ही पूरी की जाती होगी। वर्तमानकाल में भी हम देखते हैं कि इसी भाँति पूजा हुआ करती है। प्रायः ऐसा ही उस समय भी होता हो। आजकल पूगीफल अर्थात् सुपारीपर देवताओं का आवाहन कर पूजा कर देते हैं। कइयों की मूर्तियाँ भी बनाई जाती हैं और यही ढंग प्राचीन कालमें भी प्रचलित था।

रामचन्द्रजी राजप्रासादमें चले गए थे और सीता रामके घरपर ही थी। यह तो निश्चित सा हो गया था कि शीघ्रही रामका राज्याभिषेक निष्पन्न हो जायगा। ऐसे अवसरपर, सीता, रामचन्द्रजी को सफलता तथा यश मिले, इसीलिए देवपूजन कर रही थी. ऐसा उल्लेख पाया जाता है।

देवकार्यं स्म सा कृत्वा कृतज्ञा हृष्टचेतना।
अभिज्ञा राजधर्माणां राजपुत्रीं प्रतीक्षती ॥

(रा. अयोध्या. २६।४)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

' उस समय देवपूजन करनेके कारण सीताको हर्ष उत्पन्न हुआ। प्रातः-काल ही सीताका स्नान हो चुका था। अतः सम्भव है कि रामचन्द्रजीके साथही उसने देवपूजा प्रातःकाल ही समाप्त की हो। उसके पश्चात् घंटे दो घंटे बीत जाते ही फिर उसने देवपूजा का प्रारंभ किया, ऐसा रामायण में लिखा है। इस का तात्पर्य यही है कि, पति का राज्याभिषेक निर्विघ्न समाप्त हो, इस हेतु उस समय उसने फिर अपने घरमें रहनेवाली देवतापर फूल एवं पुष्पहार चढाये।

देवपूजाके पश्चात् इस प्रकार फिर पुष्पहार डलवाने की प्रथा अभीतक प्रचलित है। इस वचन में कहा है कि सीता (राजधर्माणां अभिज्ञा राजपुत्री) राजनैतिक उलझनों को समझनेवाली थी। इससे प्रतीत होता है कि, शायद सीताके मनमें यह सन्देह रहा हो, इस राज्याभिषेकमें कुछ न कुछ विघ्न जरूर उठ खडे होंगे, और इस रुकावट को हटाने के लिए पुनरपि देवतासे प्रार्थना की होगी। अस्तु। इससे स्पष्ट होता है कि, प्रमुख पूजा की क्रिया समाप्त होते ही कहीं कहीं इस भाँति उप-पूजाएँ भी हुआ करती थीं।

जब रामचन्द्रजी का वनमें चला जाना निश्चित हुआ, तब सीतासे बिदा होते समय रामचन्द्रजी उसे उपदेश देने लगे कि, वह उसके गमनके पश्चात् अपना बर्ताव कैसे रखे और तभी उससे स्पष्ट रूपसे कहा कि प्रातःकाल देवपूजा अवश्य करनी चाहिए। देखिए–

कल्यमुत्थाय देवानां कृत्वा पूजां यथाविधि।
वन्दितव्यो दशरथः पिता मम जनेश्वरः॥ ३०॥

(वा. रा. अयोध्या. २६)

" प्रातःकाल उठ जानेपर उचित ढंगसे देवों की पूजा करो और दशरथ-भूपाल की वन्दना करो। " उन दिनों की परिपाटी कुछ ऐसी जान पडती है कि, सुबह होते ही स्नान से निवृत्त हो देवपूजा की जाय। साक्षात् राज-प्रासादमें निवास करनेवाली बहुओं को भी पूजा करनी पडती थी, तो फिर दूसरे सर्दार तथा ब्राह्मण आदि लोगों की पुत्रपुत्रियाँ अपने अपने घरों

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

में देवताकी पूजा कर लिया करती थीं, यह विशद करनेकी कोई आवश्यकता नहीं जान पडती है।

अतिथि--पूजा ।

सीताने जिस समय रामचन्द्रजीसे कहा कि मैं भी वन में साथ चलूँगी, तब वनवास में किस तरह बर्ताव रखा जाय, इस बारेमें रामचन्द्रजी उसे समझाने लगे कि–

देवतानां पितॄणां च कर्तव्यं विधिपूर्वकम् ।
प्राप्तानामतिथीनां च नित्यशः प्रतिपूजनम् ॥ १४ ॥
कार्यस्त्रिरभिषेकश्च काले काले च नित्यशः ।
उपहारश्च कर्तव्यः कुसुमैः स्वयमाहृतैः॥ १५ ॥

(रा. अयोध्या. २८)

'देव, पितर एवं अतिथि का प्रतिदिन विधिपूर्वक पूजन करना चाहिए और तीनों कालों में स्नान भी करना चाहिए।' अर्थात् वनमें रहते हुए भी देवपूजा, पितृपूजा तथा अतिथिपूजा करना अनिवार्य है, ऐसी धारणा उन दिनों प्रचलित थी। इसमें विशेषता यह है कि खुद अपने हाथोंसे इकट्ठे किए हुए पुष्पोंसे भी (उपहारः) पूजा करनी पडती थी।

नगरसंरक्षक देवता ।

जब रामचन्द्रजी कोसलदेशसे बाहर निकल पडे, तब वे अयोध्यानगरी की संरक्षणकर्त्री देवीओं से जो प्रार्थना करते हैं, वह देवपूजा की दृष्टि से विचारणीय है।

अयोध्यामुन्मुखो धीमान्प्राञ्जलिर्वाक्यमब्रवीत् ॥ १ ॥
आपृच्छे त्वां पुरिश्रेष्ठे काकुत्स्थपरिपालिते ।
दैवतानि च यानि त्वां पालयन्त्यावसन्ति च ॥ २ ॥
निवृत्तवनवासस्त्वामनृणो जगतीपतेः ।
पुनर्द्रक्ष्यामि मात्रा च पित्रा च सह संगतः ॥ ३ ॥

(रा. अयोध्या. ५०)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

" अयोध्या की ओर मुँह फेरकर और हाथ जोडकर बुद्धिमान् रामचन्द्र-जीने कहा कि– हे श्रेष्ठ अयोध्या ! अब मैं तुझ से बिदा हो रहा हूँ । जो देवता तेरी रक्षा करते हैं और जो तुझ में निवास करते हैं, उनसे भी मैं दूर जा रहा हूँ । वनवास के पूर्ण होनेपर मैं पिताजी के ऋण से उऋण हो, फिर यहाँपर आऊँगा, तब मातापिताका तथा तेरा भी दर्शन मैं लूँगा । "

यहाँपर उल्लेख पाया जाता है कि, एक देवी नगर की अधिष्ठात्री के रूप में रहती है । इससे ऐसा जान पडता है कि, प्रत्येक देहात तथा नगर की एकएक रक्षणकर्त्री देवी रहती है, यह धारणा लोगोंमें प्रचलित थी । इस समय भी भारत में ' ग्रामदेवता ' के अस्तित्वपर विश्वास रखनेवाले लोग पाये जाते हैं और हर ग्राममें स्थानदेवता तथा ग्रामदेवता पाये जाते हैं ।

गंगा से प्रार्थना ।

राघवोऽपि महातेजा नावमारुह्य तां ततः ।
ब्राह्मवत् क्षत्रवच्चैव जजाप हितमात्मनः ॥ ७८ ॥
आचम्य च यथाशास्त्रं नदीं तां सह सीतया ।
प्रणमत् प्रतिसंतुष्टो लक्ष्मणश्च महारथः ॥ ७९ ॥
मध्यं तु समनुप्राप्य भागीरथ्यास्त्वनिंदिता ।
वैदेही प्राञ्जलिर्भूत्वा तां नदीमिदमब्रवीत् ॥ ८२ ॥
ततस्त्वां देवि सुभगे क्षेमेण पुनरागता ।
यक्ष्ये प्रमुदिता गंगे सर्वकामसमृद्धिनी ॥ ८५ ॥
गवां शतसहस्रं च वस्त्राण्यन्नं च पेशलम् ।
ब्राह्मणेभ्यः प्रदास्यामि तव प्रियचिकीर्षया ॥ ८८ ॥
सुराघटसहस्रेण मांसभूतौदनेन च ।
यक्ष्ये त्वां प्रीयतां देवि पुरीं पुनरुपागता ॥ ८९ ॥
यानि त्वत्तीरवासीनि दैवतानि च संति हि ।
तानि सर्वाणि यक्ष्यामि तीर्थान्यायतनानि च ॥ ९० ॥

(रा. अयोध्या. ५२)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

'अत्यंत तेजस्वी रामचन्द्रजी नाव पर चढ गये और नौका आगे बढी। तब उन्होंने ब्राह्मणों एवं क्षत्रियों के जप करनेयोग्य मंत्रों का जप करना प्रारम्भ किया। आचमन कर उन्होंने शास्त्र के कथनानुसार नदी को प्रणाम किया। जब गंगानदी के मँझधार में नौका आ पहुँची, तब सीता हाथ जोडकर उस नदी से प्रार्थना करने लगी। हे देवि! जब हम सुखपूर्वक वनवास से लौट आयेंगे तब मैं हजार गौएँ, बहुत से कपडे और अच्छे अच्छे भोज्य पदार्थ तुझे संतुष्ट करने के लिए ब्राह्मणों को दे दूँगी। सुरा-कलश सहस्र तथा मांसौदन से तेरा यजन करूँगी। तेरे तटपर जो दैवत, तीर्थ तथा देवालय हैं, सभी का पूजन तथा यजन मैं कर लूँगी।

गंगा से सीता ने यह प्रार्थना की थी। राम ने केवल गंगा को प्रणाम किया था और अपना संकल्प व्यक्त किया कि वह दैवतों की पूजा करेगा। देवपूजा के सम्बन्ध में जो प्रथाएँ प्रचलित थीं, उन पर इससे अच्छा प्रकाश पडता है।

यहाँ पर उपास्य देवता के रूप में ग्रामदेवता, स्थानदेवता, गृहदेवता एवं वास्तुदेवता प्रकट हुई हैं। बहुतसी वैदिक देवताओं की भी उपासना, कम से कम प्रार्थना तो यहाँ सुस्पष्ट है। नारायण, जनार्दन की मूर्तियाँ विद्यमान थीं, ऐसा उल्लेख पाया जाता है और अधिकतया जैसे आजकल वैसे ही गन्ध, माल्य, धूप, अक्षता की सहायता से ही पूजा की जाती थी, ऐसा दीख पडता है।

अच्छा, उपर्युक्त श्लोकों में ८९ श्लोक के बारे में कुछ अधिक विचार करना ठीक जान पडता है। उस श्लोक का स्पष्ट अर्थ ऐसा दीख पडता है कि, 'सहस्र मद्य के घडों, मांस मिलाये हुए अन्न से गंगा की पूजा की जायगी,' ऐसा सीताने कहा होगा। शब्दोंसे यही अर्थ प्रकट होता है और कई टीकाकार भी ऐसा ही मानते आये हैं। पर रामायणशिरोमणि-टीकाकार के कथनानुसार यों अर्थ है—

गङ्गापूजनसामग्रीं बोधयन्ती आह। सुरेति। पुरीं पुनः उपगता प्राप्ता अहं सुराघटसहस्रेण सुरेषु देवेषु न घटन्ते न संतीत्यर्थः तेषां सहस्रं

*

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तेन सहस्रसंख्याकसुरदुर्लभपदार्थैनेत्यर्थः । मांसभूतौदनेन मा नास्ति अंसो राजभागो यस्यां सा एव भूः पृथ्वी च उतं वस्त्रं च ओदनं च एतेषां समाहारः तेन त्वां यक्ष्ये ॥ ९ ॥

"(सुर) देवों में (अघट) न पाये जानेवाले ऐसे अतुलनीय हजारों वस्तुओं से तथा (मा-अंस-भू) जिस पृथ्वीपर राजा का कर प्रचलित नहीं है, ऐसी भूमि, [उतं] वस्त्र और [ओदनः] भात, सभी मिलाकर मैं तेरी पूजा करूँगी, अर्थात् मैं इन वस्तुओं को तेरे लिए अर्पित करूँगी।" यह अर्थ व्याकरणदृष्टि से शुद्ध है, तथापि खींचातानी करने का सन्देह पैदा होता है। अगर इस श्लोकको 'कूट श्लोक' मान लें तोही ऐसा अर्थ हो सकता है। पहले हमें देखना चाहिए कि, क्या रामायण में इस तरह कूट श्लोक पाये जाते हैं। कई कहेंगे कि यह श्लोक प्रक्षिप्त है। केवल यदि यह श्लोक बीचमें न हो, तो भी पिछले तथा अगले श्लोकों का अर्थ भली भाँति हो जाता है।

यद्यपि इस अर्थ के बारे में कुछ मतभिन्नता प्रकट होती है, तथापि हमारे प्रस्तुत विषय से इस का कोई सरोकार नहीं है। विषय है देवपूजा और इसकी पुष्टि इन वचनों से होती है, भले ही देवपूजा के साधन विभिन्न रहें। वह सवाल स्वतंत्र है और यह सच है कि यहाँपर मूर्तिपूजा का वर्णन हुआ है।

दशरथके स्वर्गवास के उपरान्त अयोध्या में जब भरत लौट आ रहा था, तब वहाँ के देवालयों की हीन तथा दुःखपूर्ण दशा को देखकर वह ऐसा वर्णन करता है-

देवतागाराणि शून्यानि न भान्तीह यथा पुरा ।
देवतार्चाः प्रविद्धाश्च यज्ञगोष्ठास्तथैव च ॥ ४० ॥
माल्यापणेषु राजन्ते नाद्य पण्यानि वा तथा ।
देवतायतनचैत्येषु दीनाः पक्षिमृगास्तथा ॥ ४२ ॥

(रा. अयोध्या. ७१)

भरत कहता है- 'देवल बिलकुल सूने दीख रहे हैं और पहले जैसे

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

जनता से परिपूर्ण नहीं दीखते हैं। देवताओं की पूजामें विघ्न हुआ प्रतीत होता है। फूलों की दुकानों में पहले जैसी भीड नहीं है। देवलों तथा चैत्योंमें पंछी तथा पशु घूम रहे हैं। जिधर देखें उधर मनहूसी एवं खिन्नता दिखाई दे रही है।' भरत को दशरथ की मृत्यु का समाचार नहीं मिला था। अन्त्येष्टिसंस्कार बिनाही राजा का प्राणशून्य पार्थिव शरीर राजप्रासाद में रखा गया था, इसी लिए पूर्ववत् भीड से भरे देवलों में पूजा नहीं होती थी। पूजार्चा के बारे में भी यह प्रणाली इस वर्णन से ध्यान में आती है।

रामचन्द्रजी को वापिस बुलवाने के लिए भरत चित्रकूटपर चला गया था, तब राज्यशासन के संबन्धमें पूछताछ करते हुए रामचन्द्रजी इस बात को पूछना न भूले कि देवालयों की दशा कैसी है? (देवस्थानैः उपशोभितः कच्चित्। अयोध्या १०० ।४२)

कच्चिद् गुरूंश्च वृद्धांश्च तापसान् देवतातिथीन्।
चैत्यांश्च सर्वान् सिद्धार्थान् ब्राह्मणांश्च नमस्यसि ॥ ६१ ॥
(वा. रा. अयोध्या.१००)

'क्या तू गुरु, वृद्ध, तापसी, देवता, अतिथि, चैत्य, सिद्धार्थ, ब्राह्मण को प्रणाम करता है?'

इस प्रश्नसे सूचना मिलती है कि, 'दैवतों का नमन राजाको करना चाहिए।' निस्सन्देह इससे स्पष्ट होता है कि देवपूजाको कितना महत्त्व दिया गया था। आगे चलकर रामचन्द्रजी सीताके साथ अगस्त्य ऋषिके आश्रम में चले गए और वहाँपर बहुतसी देवताओं की जगहें उन्होंने देख लीं। उन का वर्णन देखिए–

अगस्ति आश्रम के देवस्थान।

स तत्र ब्रह्मणः स्थानं, अग्नेः स्थानं तथैव च।
विष्णोः स्थानं, महेन्द्रस्य स्थानं, चैव विवस्वतः ॥१७॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

सोमस्थानं, भगस्थानं, स्थानं कौबेरमेव च ।
धातुर्विधातुः स्थाने च वायोः स्थानं तथैव च ॥१८॥
नागराजस्य च स्थानं, अनन्तस्य महात्मनः ।
स्थानं तथैव गायत्र्या, वसूनां स्थानमेव च ॥१९॥
स्थानं च पाशहस्तस्य वरुणस्य महात्मनः ।
कार्तिकेयस्य च स्थानं, धर्मस्थानं च पश्यति ॥२०॥
(रा. अरण्य. १२)

" उस अगस्त्य के आश्रम में राम, लक्ष्मण तथा सीता ने निम्नलिखित देवताओं के विभिन्न स्थान देख लिये– ब्रह्मा, अग्नि, विष्णु, महेन्द्र, विवस्वान्, सोम, भग, कुबेर, धाता, विधाता, वायु, नागराज, अनंत, गायत्री, वसु, पाशहस्त वरुण, कार्तिकेय, तथा यमधर्म के विभिन्न स्थान दिखाई दिये । "

चाहे इनकी मूर्तियाँ बनाकर रखी हों या कुछ दूसरे चिह्न वहाँ पर विद्यमान हों, पर यह निस्सन्देह सिद्ध होता है कि, इतने देवों के चिह्न विभिन्न थे । और उसी प्रकार ये सभी उपासना के लिए ही रखे गये थे, यह स्पष्ट है ।

इस अवतरण से स्पष्टतया जान सकते हैं कि, ऋषियों के आश्रम में किन देवताओं की उपासना हुआ करती थी । बहुधा अग्नि के लिए हवनकुण्ड होगा, पर कह नहीं सकते कि, ' गायत्री ' का चिह्न क्या था । यद्यपि ये अधिकांशमें वैदिक देवता हैं, तो भी नाग, अनंत जैसे सर्प भी हैं। जो लोग सर्पजाति को अनार्य मानते हों, वे इस पर अधिक विचार करें, क्योंकि यह नाग यहाँ पर इन ऋषियों के उपास्य देव के स्वरूप में प्रतीत होता है । ऋषियों के आश्रम में भी यह सर्पपूजा प्रचलित थी, अतः अधिक सोचनेयोग्य विषय है ।

रावण की शिवलिंगपूजा ।

उत्तरकांड के निम्नलिखित अवतरण से ज्ञात होता है कि, रावण बड़ा

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

ही शिवजी का उपासक था और वह प्रतिदिन पार्थिव लिंग की पूजा कर लिया करता था।

पुष्पोपहारं शनकैः करिष्यामि कपर्दिनः।
रावणेनैवमुक्तास्तु प्रहस्तशुकसारणाः॥ ३४॥
समहोदरधूम्राक्षा नर्मदां विजगाहिरे॥ ३५॥
उत्तीर्य पुष्पाण्याजह्रुर्बल्यर्थं रावणस्य तु।
राक्षसैस्तु मुहूर्तेन कृतः पुष्पमयो गिरिः॥
पुष्पेषूपहृतेष्वेवं रावणो राक्षसेश्वरः॥ ३८॥
अवतीर्णो नदीं स्नातुं गंगामिव महागजः।
तत्र स्नात्वा च विधिवज्जप्त्वा जप्यमनुत्तमम्॥ ३९॥
वालुकावेदिमध्ये तु तल्लिंगं स्थाप्य रावणः।
अर्चयामास गन्धैश्च पुष्पैश्चामृतगन्धिभिः॥ ४३॥
समर्चयित्वा स निशाचरो जगौ
प्रसार्य हस्तान् प्रणनर्त चाग्रतः॥ ४४॥

(वा. रा. उत्तर. ३१)

'अब रावण ने कहा कि, शंकर की पूजा करूँगा। बाद में प्रहस्त, शुक, सारण, महोदर, धूम्राक्ष जैसे राक्षस नर्मदा नदी में नहाने के लिए उतर गये। नहा चुकने पर उन्होंने फूल इकट्ठे कर एक राशि बनवाई। रावण भी नदी में उतर, स्नान कर तथा धुले कपडे पहन श्रेष्ठ मंत्र का जप करने लगा। बालू की ढेर में शिवलिंग रख दिया और गन्ध तथा फूलों से उसकी पूजा की। पश्चात् (जगौ) सामगान किया और अपने हाथ फैलाकर देव के सम्मुख नृत्य भी किया।'

ऊपर लिखे हुए वचनों से जान पडता है कि, देवता की पूजा में गायन एवं नृत्य को अवश्य स्थान था। अस्तु। ऐसा उल्लेख पाया जाता है कि, रामचन्द्रजीने अपना उपास्य दैवत बिभीषण को दे दिया था। देखिए—

किंचान्यद्वक्तुमिच्छामि राक्षसेन्द्र महाबल।
आराधय जगन्नाथं इक्ष्वाकुकुलदैवतम्॥ २७॥

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

तथेति प्रतिजग्राह रामवाक्यं बिभीषणः ।

(रा. उत्तर. १०८)

पद्मपुराण में इस बारे में यह वचन पाया जाता है—

इत्युक्त्वा प्रददौ तस्मै स्वविश्लेषासहिष्णवे ।
श्रीरंगशायिनं स्वार्चां इक्ष्वाकुकुलदैवतम् ॥
रङ्गं विमानमादाय लङ्कां प्रायाद्बिभीषणः ॥

(पद्मपुराण)

'रामचन्द्रने बिभीषण से कहा कि, 'हे बलिष्ठ राक्षसाधिप ! इक्ष्वाकु-कुल का दैवत जगन्नाथ है, तू उसकी उपासना कर ।' यह सुन बिभीषण ने अपनी स्वीकृति देदी । पद्मपुराण में 'शेषशायी श्रीरंग' देवता की उपासना का निर्देश हुआ है । इससे प्रतीत होता है कि, राक्षसों को आर्यलोग अपनी उपासना की प्रणालियों को देते थे और उन्हें अपनाते थे । उत्तरकांड में उपलब्ध यह डेढ श्लोक प्राक्षिप्त है, ऐसा कइयों का मत है । उदाहरणार्थ—

तिलकटीका- इदं सार्धश्लोकद्वयं प्रक्षिप्तमित्यन्ये ॥ २७-२८॥

'ये अढाई श्लोक कुछ लोगों की राय में प्रक्षिप्त हैं ।' तिलकटीका में कहा है कि, दूसरों की धारणा ऐसी है । सभी टीकाकार इन्हें प्रक्षिप्त नहीं मानते हैं और खुद तिलक इन्हें प्रक्षिप्त माननेको तैयार नहीं । वह कहता है, कुछ दूसरे प्रक्षिप्त समझ लेते हैं ।

पहले अयोध्याकाण्ड में, (सर्ग ४।३१-३४ तथा ६।१-७) जिन देवताओं की उपासना कौसल्या तथा रामचंद्र करते थे, ऐसा उल्लेख था, वही यह उपासना है । राक्षस शंकर या लिंग की उपासना करते थे । रामचंद्रजी के घराने में नारायण, जनार्दन, मधुसूदन, जगन्नाथ अर्थात् विष्णुकी उपासना प्रचलित थी । शंकरके उपासक बिभीषणको रामचंद्रजीने अपनी विष्णु की उपासना देदी, अर्थात् उसे विष्णु का उपासक बनाया, यह भाव स्पष्ट है । यदि इन श्लोकों की प्रक्षिप्तता सिद्ध हो जाय, तो ऊपर कही बात अमान्य हो जायगी । परन्तु पहले इतने उल्लेख दिये

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

गये हैं कि, संशयातीत रूपसे यह सिद्ध हुआ; जिस समय रामायण लिखी गयी थी, उस कालमें मूर्तिपूजा जनतामें प्रचलित तथा मान्य थी। रामायण में वैदिक देवताओं का उल्लेख अनेक बार आ चुका है और साथही साथ जनार्दनसदृश कई देवताओं का भी निर्देश पाया जाता है। इससे ऐसा अनुमान निकाला जा सकता है कि, वैदिक उपासनाकाल के उपरान्त के कालखंड में रामायण की रचना हुई थी। अस्तु। चूँकि इस भाँति रामायण में मूर्तिपूजा के बारे में उल्लेख पाये जाते हैं, अतः स्पष्ट है कि, उस समय मूर्तिपूजा प्रचलित थी।

जैसे राम, लक्ष्मण, सीता, कौसल्या आदि भारतीय आर्यों में मूर्तिपूजा प्रचलित थी, उसी प्रकार लंका के राक्षसों में भी मूर्तिपूजा करने की प्रथा रूढ थी, ऐसा पहले के लेख में प्रमाणोंद्वारा दर्शाया गया है। परन्तु क्या वानर भी मूर्तिपूजक थे या नहीं, इस विषय में कोई प्रमाण अभी तक हमें उपलब्ध नहीं हुआ। यदि किसी सज्जन को वैसा प्रमाण मिल जाय, तो वह अवश्य उसे प्रकट करे।

रामायण में उपलब्ध मूर्तिपूजाविषयक प्रमाणों का विचार इस भाँति हो चुका है। अब प्रदक्षिणा के बारे में तनिक विचार कर लेना उचित है। जो उपास्य है, पूजनीय है, उसकी प्रदक्षिणा कर लेनेकी परिपाटी चिरकाल से चली आई है। देवताकी पूजा में 'प्रदक्षिणा' उपचार को स्थान है। अब देखना है रामायण में इस विषय में क्या कहा है–

प्रदक्षिणा।

माता, पिता, वृद्ध पुरुष, गुरु, अतिथि एवं सत्करणीय लोगों की प्रदक्षिणा की जाती थी। पवित्र माने गये वृक्ष, देवालय, देवों की मूर्तियाँ तथा पूजासाहित्य की प्रदक्षिणा कर, आगे बढ जाने की प्रथा थी। उदाहरणार्थ–

चतुष्पथान् देवपथान् चैत्यान् चायतनानि च।
प्रदक्षिणं परिहरञ्जगाम नृपतेः सुतः ॥ १७ ॥

(रा. अयोध्या. १७)

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

'चौराहे, देवल की ओर जानेके मार्ग, चैत्य तथा देवालय की प्रदक्षिणा कर राजपुत्र आगे बढा।' यहाँ पर प्रदक्षिणा करने का उल्लेख है।

वन में चला जाना निश्चित होनेपर कैकेयी की प्रदक्षिणा रामचन्द्रजीने की थी, ऐसा रामायणमें कहा है–

वन्दित्वा चरणौ राज्ञो विसंज्ञस्य पितुस्तदा।
कैकेय्याश्चाप्यनार्याया निष्पपात महाद्युतिः॥ २८॥
स रामः पितरं कृत्वा कैकेयीं च प्रदक्षिणम्॥ २९॥
(रा. अयोध्या. १९)

'वन के लिए प्रस्थान करना निश्चित होते ही दशरथ राजा के पैरोंपर प्रणामार्थ मस्तक रख रामचन्द्रजीने दुष्ट स्वभाववाली कैकेयी के चरणोंपर भी सर रख दिया और पिता तथा कैकेयी की प्रदक्षिणा कर डाली।' इस अवसरपर वहाँसे निकलने के पहले अपने अभिषेक के लिए इकट्ठी की हुई सामग्री की भी प्रदक्षिणा कर दी–

अभिषेचनिकं भाण्डं कृत्वा रामः प्रदक्षिणम्।
शनैर्जगाम सापेक्षो दृष्टिं तत्राविचालयन्॥ ३१॥
(रा. अयोध्या. १९)

'अभिषेक के निमित्त इकट्ठी की हुई सभी सामग्री की भी उसने प्रदक्षिणा की।' इससे जान सकते हैं कि, उसके अंतस्तल में सभी बातों के लिए कितना पूज्यभाव छिपा पडा था। आगे चलकर रामचन्द्रजी अपनी माता के घर चले गए और उससे सारा समाचार कह दिया। कौसल्यासे विदा होते समय भी, रामचंद्रने कौसल्या की प्रदक्षिणा की है।

चकार तां हृदि जननीं प्रदक्षिणम्॥ ६४॥
(रा. अयोध्या. २१)

'माता की प्रदक्षिणा कर चुकनेपर रामचंद्रजी वन जाने के लिए तैयार हुए।' कौसल्याने भी रामका स्वस्त्ययन किया और होमहवन तथा देवपूजाके उपरान्त राम का कल्याण चित्त में धर अन्त में बिदाई के पहले उसकी भी प्रदक्षिणा की। देखिए–

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

प्रदक्षिणं चापि चकार राघवम् ।
तया हि देव्या च कृतप्रदक्षिणः ॥
(रा. अयोध्या. २५ । ४४- ४५)

'कौसल्या के राम की इस भाँति प्रदक्षिणा कर चुकनेपर रामने उसके चरण पकड लिए और आज्ञा ले ली।'

माताने पुत्रकी प्रदक्षिणा करने का उल्लेख जो यहाँपर है, वह अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है, क्योंकि बडोंने छोटेकी प्रदक्षिणा करने का प्रसंग विचारणीय है। बहुत करके प्रथा यों है कि, छोटे बडों की प्रदक्षिणा कर लेते हैं। अत्यधिक स्नेह के कारण उस समय शायद कौसल्याने रामचंद्र की प्रदक्षिणा की होगी, क्योंकि यह सर्वसाधारण प्रथा नहीं है। असाधारणतया जटिल समस्या उठ खडे होनेपर ऐसा हो जाने की प्रथा हो सकती है। रामचंद्रजी के बारे में कौसल्याके अंतस्तल में जो आदर का भाव छिपा पडा था, वही यहाँपर यों प्रकट हुआ है।

पूजाके कई उपचारों में प्रदक्षिणा करना भी एक है और वह वर्तमानकालमें पूजा में संपन्न किया जाता है। रामायणकालीन समाजव्यवस्थामें यह प्रथा रूढ थी, ऐसा उपर्युक्त विवेचन से प्रतीत होता है।

प्रदक्षिणा क्या है? मानों एक प्रकार का अनुशासन है। जो आदर के योग्य है, सम्मानार्ह है, उसे दाहिनी ओर रख स्वयं बाईं ओर से चला जाना सम्मान करने की एक प्रणाली है। [Keep to the left] राहपर चलनेसमय बाईं ओर से चले जाने का नियम तथा प्रदक्षिणा कर आगे बढने का नियम वास्तव में एकही है। यह कोई आवश्यक बात नहीं कि पूर्ण रूपसे चतुर्दिक् घुमनेपर ही प्रदक्षिणा पूरी समझी जाय। स्वयं बाईं ओर से जाकर दूसरे के लिए दाहिनी बाजू खुली रखने में भी प्रदक्षिणा पूरी हो जाती है। राहपर चलते समय पवित्र माने हुए वृक्ष, स्थान तथा देवालय यदि आ जायँ तो यथासंभव उन्हें अपनी दाहिनी ओर रख स्वयं बाईं ओर से जानेपर सम्मान व्यक्त हो जाता है। हाँ, कई बार ऐसा करना असंभव होता है, लेकिन वह लाचारी है। राज्याभिषेकके पहले जब श्रीराम-

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

चन्द्रजी राजप्रासाद में चले गए, तब ऐसे पवित्र स्थानों को दाहिनी ओर रख प्रदक्षिणापूर्वक आगे चले गए, ऐसा जो उल्लेख ऊपर किया है, उसका भाव इतना ही है।

पूजा का विवेचन करते समय प्रदक्षिणा का विचार करना जितना आवश्यक प्रतीत हुआ, उतना यहाँ पर किया गया है, जिससे स्पष्टतया सिद्ध होता है कि, रामायणकाल में प्रदक्षिणा करने की प्रथा प्रचलित थी।

पूजा का विचार करते समय ऊपर जिन पूजनीय वस्तुओं की तालिका दी गयी है, उनमें गंगा जैसी नदियाँ, अश्वत्थसदृश वृक्ष, पर्वत आदिकों का समावेश हुआ दीख पडता है। आजकल नदियाँ, वृक्ष एवं पहाड जड पदार्थ माने जाते हैं, इसलिए कुछ नई रोशनी में पले हुए ऐसा बतलाने की ओर प्रवृत्त हो रहे हैं कि, उन पार्थिव वस्तुओं में किसी प्रकार का पूज्य भाव नहीं है। अतएव इस विषय की कुछ अधिक चर्चा करना उचित जान पडता है।

रामायण-कालमें जो उपासनाएँ प्रचलित थीं, वे अधिकतया वैदिक देवताओं की ही हुआ करती थीं और यह बात स्पष्टतया ऐसा बतलाती है कि, रामायणकाल में आजकल के समान वैदिक धर्म का लोप नहीं हुआ था। वेद में इस विषय पर कुछ निर्णायक मंत्र पाये जाते हैं, जिन्हें हम पाठकों के सम्मुख रखते हैं।

१ इन्द्रो मायाभिः पुरुरूप ईयते ॥ (ऋ. ६।४७।१८)

२ पुरुष एव इदं सर्वं यद्भूतं यच्च भव्यम्। (ऋ. १०।९०।२)
(वा. य. ३१।२)

३ तदेवाग्निस्तदादित्यस्तद्वायुस्तदु चन्द्रमाः।
तदेव शुक्रं तद्ब्रह्म ताः आपः स प्रजापतिः।
(वा. य. ३२)

(१) (इन्द्रः) परमात्मा अपनी (मायाभिः) शक्तियों से अनेक रूप धारण करके गति करता है। (२) (पुरुषः) परमेश्वर ही यह सब कुछ

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.

CC-0. In Public Domain. Digitization by eGangotri/Sarayu Trust. Funding IKS-MoE-Grant-2

है (यत् भूतं) जो पहले हो चुका (यत् च भव्यं) और जो कुछ आगे चलकर होनेवाला है। (२) वह ब्रह्म ही अग्नि, सूर्य, वायु, चन्द्रमा, शुक्र, महान, जल तथा प्रजापति है।

इस तरह यह धारणा कि सारा विश्व ही परमात्मा का 'विश्वरूप' है, स्वयं वेद की मौलिक धारणाओं में से है। इसी मूलभूत कल्पना का विस्तार भगवद्गीता के ग्यारहवें अध्याय में हमें दीख पडता है। यदि एक बार यह निश्चित हो जाय कि, परमात्मा विश्वरूप है, तो (वृक्षवनस्पतयो लोमानि) पेड और वनस्पतियाँ परमेश्वर के शरीर पर के बाल हैं, (नद्यः धमनयः) सभी नदियाँ परमात्मा के शरीर में विद्यमान नसनाडियाँ हैं, (अन्तरिक्षं उदरं) अंतरिक्ष उसका पेट है और जगत्में विद्यमान अन्य पदार्थ ईश्वर के दूसरे अवयव हैं, यह बात स्पष्ट हुई।

जिन्हें यह वैदिक दृष्टि प्राप्त हुई हो, वे यदि पेड, नदियाँ, पहाड की ओर देखकर उन्हें परमात्मा के स्वरूप मान लेंगे तो कोई आश्चर्य की बात नहीं, क्योंकि वह भाव अत्यन्त स्वाभाविक प्रतीत होगा। इस सम्बन्ध में उनकी निगाह में कोई विकल्प कभी नहीं उठ खडा हो सकता है। गंगानदी का अवलोकन कर चुकने पर रामचन्द्रजी तथा सीता ने जो वचन मुँह से कहे, उन से यह बात स्पष्ट होती है कि, उनके मनमें तनिक भी सन्देह न था; वे उसे 'परमात्मा की विभूति' ही समझते थे। ऊपर सीता एवं रामचन्द्रजी के मुख से जो वाक्य निकले, वे तभी अर्थयुक्त हो सकते हैं, जब यह भाव कि, गंगानदी परमेश्वर की विभूति है, पूर्णतया मान लिया जाय। यहाँ पर इतना बतलाना आवश्यक प्रतीत होता है कि, ऊपर कही हुई पवित्र दृष्टि ही रामायणकाल में सभी उपास्योंकी ओर देखते समय जनता में प्रचलित थी और वही दृष्टिकोण मूर्तिपूजा की जड में विद्यमान था। यदि इस मौलिक सिद्धांत को मन में रख लें, तो रामायणकालीन उपासनाविधि का मनन करते समय बहुतसी उलझनें सुलझ जायेंगी।

RajGuru Math, Shivala, Varanasi Collection. Equipment: Heritage Foundation, Jalgaon.